संवैधानिक उपबंधों के परिप्रेक्ष्य में आरक्षण विमर्श

डॉ० प्रदीप कुमार
सहायक आचार्य, राजनीति विज्ञान विभाग
जे०एस०हिन्दू (पी०जी०) कॉलेज,
अमरोहा
ईमेलःdrpradeepkumar1410@gmail.com

सारांश

जभारत विश्व का सबसे बडा लोकतांत्रिक व्यवस्था वाला राष्ट्र है। इस लोकतांत्रिक व्यवस्था का संचालन संविधान में निर्दिश्ट उपबंधों के माध्यम से होता है। भारत में संविधान लागू होने का 75वॉ वर्ष है। हमारा संविधान आजादी की लडाई में उपजी मात्र वैचारिकी का नही, बल्कि पूरी सभ्यता इसमें परिलक्षित होती है। इस वर्ष सम्पन्न हुए आम लोकसभा चुनाव में संविधान स्वयं मुद्दा बन गया। भारत के नागरिक अपने अधिकारों एवं कर्तव्यों के प्रति सतर्क, स्पष्ट एवं सजग है। देश का संविधान उनके लिए सर्वोपरि है।

अभी हाल ही में सरकारी सेवाओं में अनुसूचित जाति वर्ग को आवंटित आरक्षण कोटे के सम्बंध में इस वर्ग में सम्मिलित विभिन्न जातियों को उनके प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत उच्चतम न्यायालय द्वारा आरक्षण कोटे में उपवर्गीकरण का निर्णय दिया एवं अन्य पिछडा वर्ग की तरह इसमें भी क्रीमी लेयर की अवधारणा को समाविष्ट करने का सुझाव दिया। अद्यतन् ही उ०प्र० में 69000 नियुक्त सरकारी प्राथमिक शिक्षकों की भर्ती में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ पीठ द्वारा दिये गये निर्णय में आरक्षण संबंधी विसंगतिया उजागर हुई। संघ लोक सेवा आयोग द्वारा विज्ञाप्ति लेटरल एंट्री के माध्यम से विशेषज्ञों की नियुक्ति का विज्ञापन सरकार को वापस लेना पडा। उक्त के दृष्टिगत् अद्यतन् समय में भारत के जनतांत्रिक विमर्श में आरक्षण विमर्श का विषय बन गया है। आरक्षण के विषय में विमर्श का अर्थ है, हवन करते समय हाथ जलना। यद्यपि यह ऐसा विषय बन चुका है, जिस पर व्यापक विमर्श की आवश्यकता है।

मुख्य बिन्दु

अवधारणा, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, आवश्यकता एवं औचित्य, संवैधानिक प्रावधान, आरक्षण में उपवर्गीकरण और निष्कर्ष

Reference to this paper should be made as follows:

Received: 02.08.2024
Approved: 27.09.2024

डॉ० प्रदीप कुमार

संवैधानिक उपबंधों के परिप्रेक्ष्य में आरक्षण विमर्श

RJPP April 24-Sept.24,
Vol. XXII, No. II,

PP. 132-139
Article No. 17

Online available at:
https://anubooks.com/journal-volume/rjpp-sept-2024-vol-xxii-no2

प्रस्तावना

भारत एक सशक्त, सम्प्रभु एवं लोकतांत्रिक व्यवस्था के साथ विविधताओं से युक्त राष्ट्र है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने समानता एवं न्याय पर आधारित लोकतांत्रिक गणराज्य के स्वप्न को संविधान के माध्यम से साकार रूप दिया है। प्रस्तावना को संविधान की आत्मा कहा गया है। प्रस्तावना, मूल अधिकार एवं नीति निर्देशक तत्वों के द्वारा संविधान निर्माताओं ने सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े विशिष्टतया अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति वर्ग के दृष्टिगत् भारतीय राज्यव्यवस्था की आस्था, प्रेरणाओं और मूलभूत आदर्शो को निर्धारित किया है। प्रस्तावना तथ्य निर्देश है एवं संविधान के विभिन्न अनुच्छेद तथा अनुसूचियाँ सिद्धि के साधन है।

संविधान के भाग 4 में नीति निर्देशक तत्वों की व्यवस्था है। इसके अन्तर्गत अनु० 46 में व्यवस्था है कि राज्य जनता के दुर्बल वर्गो विशिष्टतया अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों की शिक्षा और अर्थ सम्बंधी हितो की अभिवृद्धि करेगा।[1] स्वयं के प्रतिनिधि एवं स्वयं के संदर्भ में निर्णय लेने तथा लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व के परिप्रेक्ष्य मे संवैधानिक उपबंधो के दृष्टिगत् सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े विशेषकर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अन्य पिछड़े वर्ग सहित सभी व्यक्तियों के लिए संविधान में स्वतंत्रता, समानता एवं सामाजिक न्याय व्यवस्था समाहित है।

सामाजिक न्याय एक बहुआयामी अवधारणा है। इसके अन्तर्गत किसी समाज को तभी समतावादी माना जाता है, जब वह समानता, समरसता, न्याय, बंधुत्व एवं एकता के सिद्धांतों पर आधारित हो और वहाँ मानवाधिकार का सम्मान तथा प्रत्येक व्यक्ति के सम्मान एवं गरिमा और अवसर की समता की संरक्षा की जाती है। न्यायप्रिय समाज वह है, जिसमें विकलांगों, वंचितो एवं निर्बल व्यक्तियों को एक सीमा तक संरक्षण प्राप्त हो। भारत में समतावादी एवं समरसता पूर्ण समाज की स्थापना के विभिन्न माध्यमों में से आरक्षण व्यवस्था एक संवैधानिक मार्ग है।

इस वर्ष एक अगस्त को सरकारी सेवाओं में अनुसूचित जाति वर्ग के लिए आवंटित आरक्षण कोटे में इस वर्ग की विभिन्न जातियों को प्राप्त प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत् उच्चतम न्यायालय की सात जजों की संवैधानिक पीठ ने इनके कोटे में उप वर्गीकरण का निर्णय दिया। साथ ही अन्य पिछडा वर्ग की तरह इस वर्ग में भी क्रीमीलेयर का प्रावधान समाविष्ट करने का सुझाव दिया है।[2] अद्यतन् ही उत्तर प्रदेश में 69,000 सरकारी प्राथमिक शिक्षकों की भर्ती में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की लखनऊ पीठ द्वारा दिये गये निर्णय में आवंटित आरक्षण कोटे में विसंगतिया उजागर हुई। उच्च न्यायालय ने नियुक्तियों में विसंगतियों को दूर कर नयी चयन सूची तैयार करने का आदेश सुनाया।[3] इसी महीने संघ लोक सेवा आयोग को लेटरल एंट्री का विज्ञापन वापस लेना पडा। लेटरल एंट्री का एक मात्र लक्ष्य होता है, प्रतिभाशाली विशेषज्ञों को एक निश्चित समयावधि के लिए सरकार का अंग बनाना। विज्ञाप्ति पदों में एकल पद होने के दृष्टिगत् आरक्षण का प्रावधान लागू नही हुआ था।[4] आरक्षण में उप वर्गीकरण के सम्बंध में उच्चतम न्यायालय का निर्णय एवं आरक्षण के अद्यतन् घटनाचक्र के प्रति अपनी चिंताओं के दृष्टिगत् दलित और आदिवासी संगठनो द्वारा 21 अगस्त 2024 को भारत बंद का आह्वान किया गया। इसका मिला–जुला असर पूरे भारत में देखने को मिला।[5]

इन सब कारणों से भारत के जनतांत्रिक विमर्श में आरक्षण का विषय ज्वलंत मुद्दा बन गया है। यह न केवल विमर्श के रूप में सामने आया, बल्कि राजनीतिक एवं सामाजिक गोलबंदी का कारण भी बनने लगा है। आम जन को लगता है कि संसाधनों के आवंटन, निर्णय प्रक्रिया, विकास एवं लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व का एक मात्र रास्ता आरक्षण ही है। फलतः भारत में विभिन्न सामाजिक अस्मिताओं के निर्माण और उनके आपसी सम्बंधों के निर्धारण में आरक्षण विमर्श की भूमिका महत्वपूर्ण हो गयी है। अतः इसी के दृष्टिगत् आवश्यक हो जाता है कि संवैधानिक उपबंधों के परिप्रेक्ष्य में आरक्षण की अवधारणा, ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, आवश्यकता एवं औचित्य, संवैधानिक प्रावधान, आरक्षण में उपवर्गीकरण की अवधारणा को स्पष्ट कर लिया जाए।

आरक्षण की अवधारणा :–

आरक्षण से आशय ऐसी व्यवस्था से है, जिसके माध्यम से समाज के पिछड़े, वंचित, शोषित एवं ऐतिहासिक अन्याय से उत्पीडित वर्गो के लिए शैक्षणिक संस्थानों, सरकारी सेवाओं एंव व्यवस्थापिकाओं में प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत् निश्चित संख्या में स्थान अर्थात सीटे आरक्षित की जाती है। दूसरे शब्दों में आरक्षण मौजूदा विकास एवं सत्ता में प्रभावी सकारात्मक विभेद का तरीका है, जिसके माध्यम से सामाजिक एवं ऐतिहासिक अन्याय के दृष्टिगत सामाजिक व्यवस्था में वंचित, शोषित एवं उत्पीडित वर्गो को शिक्षा, रोजगार, आधुनिकीकरण एवं राजनीतिक प्रतिनिधित्व तथा सरकारी सेवाओं में वरीयता प्रदान की जा सके, ताकि समाज में समता, समरसता एवं बंधुत्व का भाव पैदा हो सके।

आरक्षण की विधि मान्यता की परख इस आधार पर की जा सकती है कि क्या यह तर्कसंगत तथा प्रासंगिक मांनदण्ड पर आधारित है। आरक्षण के साथ दो पहलू सम्बंधित है –

1. प्रभावी सुरक्षात्मक विभेद से सृजित अवसरों का समान बटँवारा।

2. उपेक्षित समूहों में आरक्षण का लाभ लेने की शक्ति, सामर्थ्य एवं स्थिति को बनाना। आरक्षण सामाजिक न्याय के लिए एक बहुमूल्य माध्यम है। सामाजिक न्याय के लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की प्राप्ति का यह एक संवैधानिक मार्ग है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

ऐतिहासिक दृष्टि से भारत में आरक्षण की शुरूआत 1882 में हंटर आयोग के गठन से मानी जाती है। तत्समय् महान समाज सुधारक महात्मा ज्योतिबा फुले ने सभी के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा तथा ब्रिटिश सरकार की नौकरियों में आनुपातिक प्रतिनिधित्व अर्थात आरक्षण की मांग की थी। तत्पश्चात् सन् 1891 में सरकारी सेवाओं में आरक्षण की मांग त्रावनकोर में सामंती रियासत में भी की गयी। सन् 1901 में महाराष्ट्र के सामंती रियासत कोल्हापुर में साहु महाराज द्वारा आरक्षण की शुरूआत एक अधिसूचना के माध्यम से की गयी। इसे भारत में दलित वर्गो के कल्याण के लिए आरक्षण उपलब्ध ा कराने वाला पहला सरकारी आदेश माना गया। सन् 1909 एवं सन् 1919 में भारत सरकार अधि ानियमों में व्यवस्थापिकाओं में प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत धार्मिक आधार पर पृथक निर्वाचन अर्थात आरक्षण का प्रावधान किया गया। सन् 1921 में मद्रास प्रेसीडेंसी ने जातिगत सरकारी आज्ञापत्र जारी किया, जिसमें गैर ब्राहमणों के लिए 44 प्रतिशत, ब्राहमणों के लिए 16 प्रतिशत, मुसलमानों के लिए 16 प्रतिशत, भारतीय एंग्लो एवं ईसाइयों के लिए 16 प्रतिशत और अनुसूचित जातियों के लिए 8 प्रतिशत

आरक्षण की व्यवस्था की गयी। आरक्षण के इस पौधे को सन् 1932 में ब्रिटिश प्रधानमंत्री रैम्जे मैकडोनाल्ड के 'कम्यूनल एवार्ड' द्वारा पोषित किया गया। पूना पैक्ट में दलितों के लिए केन्द्रीय एवं राज्य व्यवस्थापिका में प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत स्थान आरक्षित हुए। सन् 1935 के भारत सरकार अधिनियम में आरक्षण का प्रावधान किया गया। सन् 1942 में बी.आर. अम्बेडकर ने अनुसूचित जाति की उन्नति के लिए अखिल भारतीय दलित वर्ग महासंघ की स्थापना की थी। इसके माध्यम से सरकारी सेवाओं और शिक्षा के क्षेत्र में अनुसूचित जातियों के लिए आरक्षण की मांग की गयी। स्वतंत्र भारत में उक्त समस्त सकारात्मक प्रयास भारतीय संविधान के संवैधानिक उपबंधों से परिलक्षित होते है।

स्वतंत्रता उपरान्त सरकारी सेवाओं में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों को संविधान द्वारा प्रदत्त आरक्षण के साथ ही पिछड़े वर्गो के लिए आरक्षण की मांग उठने लगी। पिछड़े वर्ग के अन्तर्गत कौन आता है, इसके निर्धारण के लिए सन् 1953 में काका कालेलकर की अध्यक्षता में प्रथम पिछडा वर्ग आयोग का गठन किया गया। यद्यपि आयोग की सिफारिशे लागू न की जा सकी। 20 दिसम्बर सन् 1978 को पिछड़े वर्गो की पहचान के लिए बिन्देश्वरी प्रसाद मंडल की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया गया। यह आयोग मंडल आयोग के नाम से जाना गया। इस आयोग ने जाँच के दौरान लगभग 3743 ऐसी जातियों की पहचान की, यह सामाजिक एवं शैक्षणिक आधार पर पिछडी थी एवं इन्हे विशेष सुविधा प्रदान किये जाने की आवश्यकता थी। आयोग ने इनके लिए 27 प्रतिशत आरक्षण की व्यवस्था किये जाने की सिफारिश की थी।[6] तत्समय् विभिन्न राजनीतिक कारणें से इन सिफारिशें को लागू न किया जा सका। 13 अगस्त सन् 1990 को तत्कालीन भारत के प्रधानमंत्री श्री विश्वनाथ प्रताप सिंह ने मंडल आयोग की सिफारिशें को लागू करने की घोषणा की। आयोग एवं समितियों के निर्माण एवं उनकी सिफारिशों का क्रम अद्यतन् जारी है।

आवश्यकता एवं औचित्य

प्रश्न यह उठता है कि जब संविधान नागरिकों के बीच भेदभाव का निषेध करता है, तब आरक्षण की आवश्यकता एवं औचित्य क्या है? इस प्रशन का उत्तर दिये जाने से पूर्व समाज में व्याप्त विषमता पर विचार किया जाना अपरिहार्य है। विषमता के सम्बंध में जे०जे० रूसो ने अपनी प्रसिद्ध कृति 'डिस्कोर्स आन इनिक्वैलिटी' के अन्तर्गत विवेचना की है। अपनी इस कृति में इन्होने मानव के दृष्टिगत् प्राकृतिक विषमता एवं परंपरागत विषमता का वर्णन किया है। इनके अनुसार प्राकृतिक विषमता वस्तु स्थिति का वर्णन करती है। उदाहरणतया जैसे मनुष्य में आयु, ऊँचाई, गोरा एवं काला में भिन्नताएं प्राकृतिक व्यवस्था की देन है एवं प्रायः अटल अर्थात अपरिवर्तनशील होती है। दूसरी ओर परंपरागत विषमता धन–सम्पदा, पद–प्रतिष्ठा और शक्ति की भिन्नता को सूचित करती है। इसके अन्तर्गत कुछ गिने–चुने लोगो को ऐसे विशेषाधिकार प्राप्त हो जाते है, जिनसे जनसाधारण को वंचित रखा जाता है। यह भिन्नता समाजीकृत एवं परिवर्तनशील है।[7] वैदिक काल में भारतीय समाज कर्म के आधार पर चार वर्णो में विभक्त था, परन्तु उत्तर वैदिक काल तक ही वर्ण व्यवस्था वंशानुगत रूप ग्रहण कर चुकी थी। कालांतर में यह सामाजिक एवं ऐतिहासिक अन्याय का कारण बनी।

संविधान निर्माण की पृष्ठभूमि में राष्ट्रीय स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान किए गए अनुभव भी है। उस समय यह अनुभव किया गया कि राष्ट्र के सर्वागीण विकास एवं आधुनिकीकरण के लिए

समाज में व्याप्त सामाजिक एवं ऐतिहासिक अन्याय के दृष्टिगत् सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े, शोषित एवं उत्पीड़ित वर्गो का उत्थान आवश्यक है। आरक्षण को नीति के रूप में राज्य द्वारा तथाकथित ''उच्च जातियो'' द्वारा कुछ जातियों के साथ किए गए ऐतिहासिक अन्याय को दूर कर समतापूर्ण समाज बनाने के लिए अपनाया गया है।

समानता के सिद्धांत का अर्थ है, समान परिस्थितियों में रहने वाले लोगो के साथ समान व्यवहार करना न कि असमान परिस्थितियों में रहने वाले के साथ समानता का व्यवहार करना। भारतीय संविधान निर्माता इस तथ्य से परिचित थे। उक्त के दृष्टिगत् उन्होने संविधान में सामाजिक एवं शैक्षिक रूप से पिछड़े, शोषित एवं ऐतिहासिक अन्याय से उत्पीडित वर्गो विशेषकर अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वर्ग के लिए विशेष उपबंधो की व्यवस्था अपनायी। साथ ही अस्पृश्यता के निषेध की व्यवस्था अनु० 17 में स्थापित की।

संवैधानिक प्रावधान

संविधान में पिछड़े वर्गो के विकास एवं उत्थान के लिए अनेक रक्षोपाय का उल्लेख है। इन वर्गो में पिछडी जाति, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति शामिल है। यद्यपि हमारा विमर्श विशिष्टतया अनुसूचित जाति है। संविधान में अनुसूचित जाति के लिए कोई परिभाषा नही दी गयी है। अनु० 341 के अन्तर्गत राष्ट्रपति को यह शक्ति प्राप्त है कि वह लोक सूचना द्वारा उन जातियों को उल्लिखित करेगा, जो इस प्रयोजन के लिए अनुसूचित जातियाँ समझी जायेगी। यदि अधिसूचना राज्य से सम्बंधित है, तब वह राज्य के राज्यपाल से परामर्श करके ऐसी सूची निर्मित करायेगा। संसद इस सूची का पुनरीक्षण कर सकती है। संसद के अधिनियमों द्वारा अद्यतन् अनेक संशोधन किए जा चुके है।[8]

व्यवस्थापिकाओं में प्रतिनिधित्व

संविधान के अनु० 330 में लोकसभा में अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानो के आरक्षण की व्यवस्था है। स्थानों का आरक्षण राज्य अथवा संघ राज्यक्षेत्र में उनकी जनसंख्याँ के अनुपात में होता है। इसी तरह अनु० 332 में राज्य विधान सभाओं में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों के आरक्षण की व्यवस्था है।

स्थानीय निकायों के अन्तर्गत पंचायत के प्रत्येक स्तर पर अनु० 243घ में प्रावधान है कि अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण होगा एवं प्रत्येक नगर निकाय में अनु० 243न के अन्तर्गत अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए उनकी जनसंख्याँ के अनुपात में स्थानों का आरक्षण होगा। स्थानीय निकायों में यह संवैधानिक प्रावधान है कि महिलाओं के लिए प्रत्येक स्तर पर उपलब्ध कुल सीटों की संख्या एक तिहाई से कम न हो।

21 जनवरी सन् 2020 को पारित हुए 104 वे संविधान संशोधन द्वारा अनु० 334 में यह

प्रावधान किया गया है,कि लोकसभा एवं राज्य विधान सभा में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के लिए आरक्षण सन् 2030 तक बना रहेगा। साथ ही पंचायतों एवं नगर निकायों में आरक्षण अनु० 334 में विनिर्दिष्ट अवधि की समाप्ति पर प्रभावी नही रहेगा।[9] 106वे संविधान संशोधन के माध्यम से नारी वंदन अधिनियम अस्तित्व में आया। इसके अन्तर्गत व्यवस्थापिकाओं में अनु० 239, अनु० 330 एवं अनु० 332 के दृष्टिगत् महिलाओं के लिए 33 प्रतिशत स्थान आरक्षित

होंगे। चुनाव परिसीमन उपरान्त सन् 2029 तक इस अधिनियम के प्रावधान लागू हो पायेंगे।

शैक्षणिक संस्थाओं में आरक्षण

अनु० 15 में खण्ड (5) को 93वे संविधान संशोधन अधिनियम 2005 द्वारा अंतः स्थापित किया गया है। इसके अनुसार राज्य सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गो या अनुसूचित जाति या अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए उच्च शिक्षण संस्थाओं में प्रवेश से सम्बंधित उपबन्ध कर सकता है। अल्पसंख्यक शिक्षण संस्थाओं को इससे मुक्त रखा गया है।

अनु० 15 में ही खण्ड (6) को 103वे संविधान संशोधन अधिनियम 2019 द्वारा जोडा गया है। यह नागरिकों के आर्थिक रूप से कमजोर वर्गो की उन्नति के लिए विशेष उपबंध का प्रावधान करता है। इसमे शैक्षणिक संस्थाओं में प्रवेश से सम्बंधित उपबंध भी सम्मिलित है। इस अधिनियम द्वारा आर्थिक रूप से कमजोर वर्गो (ँ) के लिए 10 प्रतिशत स्थान आरक्षित सम्बंधी आदेश जारी किये गये हैं।[10] अल्पसंख्यक संस्थाओं को इससे मुक्त रखा गया है।

सरकारी सेवाओं में आरक्षण

संविधान के अनु० 16 (4) के अनुसार, राज्य सामाजिक तथा शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गो के लिए नियुक्तियों और पदों के आरक्षण के लिए विशेष उपबंध कर सकता है, यदि उसकी राय में उन वर्गो का राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व नही है। यह शर्त सेवाओं में प्रतिनिधित्व की केवल संख्यात्मक पर्याप्तता का नही बल्कि गुणात्मक पर्याप्तता का भी निरूपण कर सकती है। अनु० 16 (4क) के अन्तर्गत यह प्रावधान है कि इस अनु० की कोई बात राज्य को अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के पक्ष में, जिनका प्रतिनिधित्व राज्य की राय में राज्य के अधीन सेवाओं में पर्याप्त नही है, राज्य के अधीन सेवाओं में किसी वर्ग या वर्गो के पदों पर, पारिणामिक ज्येष्ठता सहित प्रोन्नति के मामलों में आरक्षण के लिए उपबंध करने से निवारित नही करेगी।

स्पष्टतः आरक्षण के लिए दो शर्ते निर्धारित की गई है –

1. राज्य के अधीन सेवाओं में उक्त वर्ग का पर्याप्त प्रतिनिधित्व न हो।
2. यह वर्ग सामाजिक एवं शैक्षिक दृष्टि से पिछडा हुआ हो।

अदालतों के निर्णय के अनुसार अनु० 16 (4) को अनु० 335 के साथ पढा जाना चाहिए। अनु० 335 में कहा गया था कि अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के उम्मीदवारों की नियुक्ति करने में प्रशासन की दक्षता बनाए रखने का ध्यान रखा जाए। 08 सितम्बर सन् 2000 से लागू 82वे संविधान संशोधन द्वारा अनु० 335 में एक परंतुक जोडकर कहा गया कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के सदस्यों के लिए किसी भी परीक्षा में योग्यता के लिए जरूरी अंको में कमी की जा सकती है अथवा मूल्यांकन के मानक घटाए जा सकते है एवं यह व्यवस्था सभी स्तर की सरकारी सेवाओं एवं पदोन्नति के मामले में भी लागू होगी।

वर्तमान में केन्द्र सरकार की अधिसूचना के दृष्टिगत् सरकारी सेवाओं एवं शैक्षिक संस्थाओं में अनुसूचित जाति के लिए 15 प्रतिशत, अनुसूचित जनजाति के लिए 7.5 प्रतिशत, अन्य पिछडा वर्ग के लिए 27 प्रतिशत एवं 103वे संविधान संशोधन 2019 उपरान्त आर्थिक रूप से कमजोर वर्गो के लिए 10 प्रतिशत आरक्षण है। यह उर्ध्वाधर व्यवस्था है। इसी में अन्य उप वर्गो के दृष्टिगत क्षैतिज आरक्षण

की भी व्यवस्था है। संसद द्वारा 81वे संविधान संशोधन अधिनियम सन् 2000 द्वारा अनु० 16 (4ख) जोडा गया है। इसके अनुसार यदि आरक्षित पद उस वर्ष नही भरे जा सके, तब उन्हे अनुवर्ती या आगामी वर्ष में होने वाली नियुक्तियों में जोड दिया जायेगा तथा उसे 50 प्रतिशत की सीमा के अन्तर्गत शामिल नही किया जायेगा। इसे अग्रनयन का सिद्धांत (Principle of carry forward) का नाम दिया गया है।

आरक्षण का उपवर्गीकरण

अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को सरकारी सेवाओं में प्राप्त आरक्षण को उनके प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत् उपवर्गीकरण किये जाने का वाद विगत कई वर्षो से माननीय उच्चतम न्यायालय में चल रहा था। उच्चतम न्यायलय की सात सदस्यीय संवैधानिक पीठ ने सेवाओं में प्राप्त प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत् एक अगस्त सन् 2024 को इनके कोटे को उपवर्गीकष्त किये जाने का निर्णय दिया। पूर्व में सन् 2004 में ईवी चिन्नैया बनाम आंध्रप्रदेश राज्य में दिये पाँच सदस्यीय संवैधानिक पीठ का निर्णय था कि राज्य सरकारे अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति को सेवाओ में प्रदत्त आरक्षण में उपवर्गीकरण नही कर सकती। इस वाद में उच्चतम न्यायलय का निर्णय था कि अनुसूचित समुदाय का सजातीय होने के कारण उप वर्गीकरण नही हो सकता है, परन्तु अद्यतन् निर्णय (पंजाब राज्य) में सात जजों की संवैधानिक पीठ ने ऐतिहासिक साक्ष्यों का हवाला देते हुए कहा है कि अनुसूचित जातियाँ एक सजातीय वर्ग नही है। इस लिए उप वर्गीकरण अनु० 14 में निहित समानता के अधिकार का उल्लंघन नही करता है।[11] यद्यपि सन् 1992 में इंदिरा साहनी बनाम भारत संघ में उच्चतम न्यायलय ने अपने निर्णय में स्वीकार किया था कि अन्य पिछडा वर्ग के भीतर उपवर्गीकरण किया जा सकता है।

उच्चतम न्यायलय ने अद्यतन् निर्णय में बहुमत से निर्णय दिया कि राज्यों को आरक्षण के लिए प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत कोटा के भीतर कोटा बनाने का अधिकार है। दूसरे शब्दों में राज्य अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए उपवर्गीकरण कर सकती है, ताकि सबसे जरूरतमंद को आरक्षण में प्राथमिकता मिले। राज्य विधानमंडल इस सम्बन्ध में कानून बनाने में सक्षम है, ऐसा करना अनु० 15 एवं अनु० 16 का उल्लघंन नही है। स्वयं संविधान का अनु० 341 भी इसके खिलाफ नही है। न्यायालय ने यह भी माना कि किसी एक जाति को 100 प्रतिशत कोटा नही दिया जा सकता है। राज्य सरकारे पिछड़ेपन का आंकलन करते समय तर्कसंगत एवं सम्यक मानदंड उपयोग में लाये। प्रतिनिधित्व का अर्थ संख्यात्मक नही, बल्कि गुणात्मक भी होना चाहिए। राज्य सरकारे अपनी मर्जी या राजनीतिक लाभ के आधार पर वर्गीकरण नही कर सकते एवं उनके फैसले न्यायिक समीक्षा के अधीन होंगे।

निष्कर्ष

भारतीय जनतांत्रिक राजनीति में आरक्षण विमर्श का विषय बना हुआ है। इस वर्ष हुए 18वी लोक सभा के चुनाव के दौरान ''संविधान खतरे में है'' का नेरेटिव विपक्षी दलो द्वारा बनाया गया। इस वर्ष एक अगस्त को अनुसूचित जाति के आरक्षण में प्रतिनिधित्व के दृष्टिगत् माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा उपवर्गीकरण का निर्णय दिया गया। वास्तव में आर्थिक एवं सामाजिक समानता लाने

के उद्देश्य से ही आरक्षण व्यवस्था अस्तित्व में आयी है। न्यायालय का फैसला निस्संदेह महत्वपूर्ण है, परंतु इसके क्रियान्वयन के लिए जरूरी अनुभवजन्य साक्ष्य जुटाना जटिल काम है।

आरक्षण का लाभ किसी एक व्यक्ति तक सीमित नही रहता, बल्कि उससें जुडे परिवार एवं समुदाय को भी होता है। आरक्षण एवं तमाम प्रभावी सकारात्मक कारवाई की नीतियाँ मौजूदा सामाजिक एवं ऐतिहासिक अन्याय से उत्पन्न असंतुलन को ठीक करने के लिए निर्मित की गयी है, न की किसी विशेष समूह के साथ भेद–भाव करने के लिए। अनुसूचित जाति वर्ग की कुछ उपजातियाँ आरक्षण में कम क्यों दिखाई देती है, यह भ्रामक स्थिति साफ होनी चाहिए। अमतृकाल के इस दौर में विकास एवं सत्ता में आम जन की भागीदारी को न्याय संगत बनाने के प्रति सकारात्मक दृष्टिकोण अपनाना होगा, एवं सन् 2047 तक विकसित भारत का सपना पूरा करने के लिए तर्कसंगत एवं सम्यक प्रक्रिया का पालन करते हुए लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व को समावेशी बनाया जाना चाहिए।

सन्दर्भ

1. धर, कुलदीप, (2010) भारत का संविधान, लॉ काटेज, दरभंगा कॉलोनी, प्रयागराज, पृष्ठ – 12.
2. अमर उजाला (02 अगस्त, 2024), मुरादाबाद संस्करण, पृष्ठ – 1.
3. अमर उजाला (17 अगस्त, 2024), मुरादाबाद संस्करण, पृष्ठ– 1.
4. दैनिक जागरण (21 अगस्त, 2024), मुरादाबाद संस्करण, पृष्ठ– 1.
5. हिन्दुस्तान (22 अगस्त, 2024), मुरादाबाद संस्करण, पृष्ठ– 8.
6. लक्ष्मीकांत, एम०, (2024) भारत की राज्य व्यवस्था, मैकग्रा हिल, चेन्नई, पृष्ठ– 70.
7. गाबा, ओ.पी., (2022) राजनीति–सिद्धान्त की रूपरेखा, नेशनल पेपर बैक्सः दरियागंज, दिल्ली, पृष्ठ – 70.
8. पाण्डेय, डॉ0 जय नारायण, (2003), भारत का संविधान, सैन्ट्रल लॉ एजेन्सी, प्रयागराज, पृष्ठ – 593
9. उपाध्याय, डॉ० जय जय राम, (2024), भारत का संविधान, सैन्ट्रल लॉ एजेन्सी, प्रयागराज, पृष्ठ – 198
10. काश्यप, सुभाष, हमारा संविधान (2021), राष्ट्रीय पुस्तक न्यास, भारत, नई दिल्ली, पृष्ठ– 90
11. अमर उजाला (03 अगस्त, 2024), मुरादाबाद संस्करण, पृष्ठ – 8.